INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 1 | FEBRUARY – 2025

''वनों एवं जनजातियों का पारस्परिक संबंध एक अध्ययन''

डॉ. बी.एल.पाटीदार[1] , वालसिंह मावी[2]
[1]प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, उमरबन, जिला धार (म. प्र.)
[2]शोधार्थी (भूगोल) माता जीजाबाई शास. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दे.अ.वि.वि. इन्दौर .

प्रस्तावना –

मध्यप्रदेश में जनजातियों की जनसंख्या बहुतायत में पाई जाती है। ये जनजातियाँ प्रदेश के अनेक अंचलों जैसे मालवा, बुन्देलखण्ड, बघेलखण्ड व महाकौशल में निवास करती है। छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, राजस्थान आदि क्षेत्रों से जुड़े होने के कारण इन प्रदेशों की भी कुछ जनजातियाँ सीमान्त क्षेत्रों में है। ।

आदिकाल से ही वन और मानव समाज के संबंध अटूट रहे हैं परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत एवं अटल नियम है। मानव समाज भी उसी प्रकृति का अभिन्न अग है। वन और जनजातीय समुदाय एक–दूसरे पर निर्भर है। जंगलों की वन सम्पदा से ही आदिवासी समाज की संस्कृति पुष्पित एवं पल्लवित हुई है।

शहरी एवं ग्रामीण समुदायों में जहाँ कई शासक, व्यापारी, व्यवसायी, ठेकेदार आदि इन लोगों ने अपनी अलग पहचान बनाई तथा जनजातियों में बाहर से आकर सम्मिलित हुए हैं उन्होंने ही वनों के कटाव एवं उनका दोहन अपने हितों के लिए किया है।

वर्तमान में जनसंख्या वृद्धि बाजारीकरण, कृषि सिंचाई छोटे–छोटे उद्योगों आदि के प्रभाव के कारण जंगल पर दबाव लगातार बढ़ता जा रहा है समय के साथ–साथ जनजातियों की वनों पर निर्भरता घट रही है।

परन्तु जनजातियों का मौलिक निवास क्षेत्र आज भी विशेषकर सघन वन क्षेत्रों में ही स्थित है। अतः जनजातियों का वनों के साथ सम्बन्ध आज भी पारम्परिक है। अलीराजपुर जिले के क्षेत्रीय विकास में भी वनों की भूमिका बहत महत्वपूर्ण है। वनों से कई प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष लाभ भी है जो क्षेत्रीय पारिस्थितिकी की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। अलीराजपुर एक जनजातीय प्रधान जिला है परन्तु वन विनाश के प्रचार–प्रसार, शासकीय नीतियों के साथ–साथ जनजातियों के सम्बन्धों को व्यापक रूप से प्रभावित किया है जो सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक परिवर्तन का कारण है। इनके जीवन में वनों के बढ़ते महत्व का कारण है।

जनजाति जनसंख्या के दृष्टिकोण से भारत संघ में मध्यप्रदेश राज्य का महत्वपूर्ण स्थान है। मध्यप्रदेश का प्रत्येक पाँचवा व्यक्ति जनजाति वर्ग का है अर्थात् राज्य की कुल जनसंख्या का 21.1% अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या हैं। देश के सभी राज्यों तथा संघीय क्षेत्रों में मध्यप्रदेश शीर्ष स्थान पर है, जबकि प्रतिशतता के संदर्भ में तेरहवाँ स्थान है। छत्तीसगढ़ राज्य के गठन के पष्चात् मध्यप्रदेश में 43 अ.ज.जा. और उनकी उपजातियाँ निवास करती है। जिनमें भील(सर्वाधिक), गोंड, कोल, कोरकू, सहरिया, बैगा, भारिया आदि प्रमुख जनजातियाँ हैं। इस तरह मध्यप्रदेश का जनजातीय परिदृष्य अनूठा हैं। मध्यप्रदेश में जनजातिजनसंख्या का वितरण सभी जिलों में है, जहाँ जनजाति आबादी का 91.7 % गाँव में तथा 2.3% नगर में निवास करती है।

मध्यप्रदेशकी अ.ज.जा. की अपनी विशिष्ट प्रकृति रही है। इन वर्गों की समस्याएँ भी बहुआयामी है, जिनका निदान चुनौतिपूर्ण है। मध्यप्रदेश की स्थापना के साथ ही प्रदेश सरकार द्वारा जनजातीय वर्ग की

सामाजिक जीवनवृत्त और सांस्कृतिक स्वरूप को ध्यान में रखकर इन वर्गों के कल्याण के लिए विभिन्न योजनाओं में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक प्राथमिकताएँ तय की गई है।

जनजाति विकास को दृष्टिगत रखते हुए मध्यप्रदेश शासन ने आदिम जाति कल्याण विभाग का गठन किया, जो सन् 1968 से कार्यरत है तथा सन् 1974 में शासन का प्रमुख विभाग का दर्जा प्रदान किया गया। वस्तुतः यह विभाग जनजातीय कल्याण हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाओं, नीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन कार्य कर रहा है जिनमें शिक्षा विषयक योजनाएँ प्रमुख है। इसके अतिरिक्त विभाग और मध्यप्रदेश शासन द्वारा रोजगार–स्वरोजगार, सामुदायक लाभ वाली योजनाएँ क्रियान्वित की जा रही है।

शोध समस्या का चयन –

सामाजिक विज्ञानों के शोध कार्य में शोधकर्ता का व्यक्तित्व एक महत्वपूर्ण कारक है, जो समस्या के चयन के लिये उत्तरदायी है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि शोध समस्या का चयन शोधकर्ता के व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि द्वारा प्रभावित होता है फिर भी समस्या का चयन करते समय एक सामान्य पृष्ठभूमि का चयन करना आवश्यक है, अन्यथा वह शोध वैयक्तिक विचारधारा से प्रभावित हो सकता है जो समाज के लिये लाभकारी होने के स्थान पर अनुपयोगी शोध बन सकता है, अतः शोध की समस्या के निर्धारण में व्यक्तित्व को सर्व मान्यता नहीं दी जा सकती है।

साहित्य का पुनरावलोकन –

परम्परागत रूप से वन जनजातीय जीवन के अभिन्न अंग रहे है। बाहरी क्षेत्र के लोगों द्वारा अतिक्रमण और प्राकृतिक सम्पदा के दोहन पर आधारित शासकीय नीतियों के कारण ये वन शासकीय सम्पत्ति में परिवर्तित हो गये और आरक्षित वनों और उनकी सीमाओं पर रहने वाले लोगों का आर्थिक आधार कम हो गया। वन अधिकारों सम्बन्धी मान्यता के लिए अनुसूचित जनजाति एव परम्परागत वनवासी अधिनियम 2006, 18 दिसम्बर 2006 में बनाया गया। शर्मा जे. वी. कोहली दो मुख्य वनीय कानून 1927 और 1972 वनीय संरक्षित क्षेत्र जिसमें आरक्षित संरक्षित गांव के वनीय क्षेत्र स्थानीय संरक्षण की अनुमति देता है।

इससे सम्बन्धित विभिन्न विद्वानों के विचार निम्नलिखित है –

अत्तासी (1986) आज म.प्र. के पश्चिमी अंचल में जनजातियों की अर्थव्यवस्था में वनों का योगदान नगण्य है और अकुशल मजदूरी ही जीवनयापन का एक प्रमुख सहारा है।

अशोक डी. पाटिल (1988) ने अपने इस अध्ययन में भीलों का यथार्थवादी मौलिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक में तीन दशक पूर्व के अध्येताओं को भी सम्मिलित किया गया है। भीलांचल के लोक जीवन को एक दृष्टि प्रदान की है। इस पुस्तक का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमे वर्तमान में दिखाई दे रहे परिवर्तन जो शासन की विकासवादी नीतियों से है। इनमें परिवर्तन की प्रक्रिया को भी लिपिबद्ध करने का श्रेय प्राप्त किया है।।

तिवारी डी एन. (1989) आदिवासी एवं वनों के बीच सम्बन्धों का ध्यान रखते हुए वन विकास निगमों सहित वन प्रबंध के लिए उत्तरदायी समस्त अभिकरणों का प्रधान कार्य वनों में तथा उसके चारों ओर रहने वाले आदिवासियों को लाभदायक रोजगार उपलब्ध कराने के अतिरिक्त वनों की सुरक्षा पुनरूद्धार एवं विकास के लिए आदिवासियों को सहायता मिलनी चाहिए। आदिवासियों के परम्परागत अधिकारों एवं हितों की रक्षा करते समय वानिकी कार्यक्रमों पर ध्यान देना चाहिए। वनों में ठेकदार के स्थानों पर आदिवासी सहकारी समितियों अथवा शासकीय निगम जैसे संस्थान से कार्य कराया जाना चाहिए।

राठौर अजय सिंह (1994) ने अपने अध्ययन में उल्लेख किया कि आदिवासी संस्कृति का अक्षुण्ण रखते हुए उनके परम्परागत व्यवसाय को उन्नत बनाया जाना चाहिए। अन्य समुदायों की तरह उनकी जीवन शैली बदल रही है। आदिवासी कृषि करते हैं उनके पास पर्याप्त जमीन और संसाधन हो और वे अपनी मेहनत से आवश्यकताएं पूरी करने में सक्षम हो इस हेतु समग्र प्रयास करना आवश्यक है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में वनोपज की बढ़ती माँग के अनुरूप वन्य संसाधनों का दोहन करके उसकी प्रतिपूर्ति करना अनिवार्य है। इसमें बताया गया कि आदिवासी क्षेत्रों के जल संसाधनों में बिजली का उत्पादन करना चाहिए।

अमित ठाकुर (1994) शासकीय नीतियों द्वारा भूमि से विस्थापन और वन सम्पदा में घटती भागीदारी से संपूर्ण जनजातीय समाज की मूल सामाजिक आर्थिक व्यवस्था चरमरा गयी है और इसमें भारी फेरबदल देखने को मिल रहे है। इन बदलावों का सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव अधिक दिखाई दे रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य –

- अध्ययन क्षेत्र में विगत दो दशकों में वनों की स्थिति का अध्ययन करना।
- अध्ययन क्षेत्र में वनों एवं जनजातियों के बदलते सम्बन्धों का सैद्धांतिक अध्ययन।
- वनों के विकास में आदिवासियों के योगदान का अध्ययन करना।

विगत् दो दशकों में वनों की स्थिति का अध्ययन

तालिका क्र.
शासन द्वारा संरक्षित वनों के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

क्रमांक	संरक्षित वन	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	157	56.07
2	नहीं	123	43.92
	योग	**280**	**100**

स्त्रोत–अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर

रेखाचित्र क्र. 17
संरक्षित वनों के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

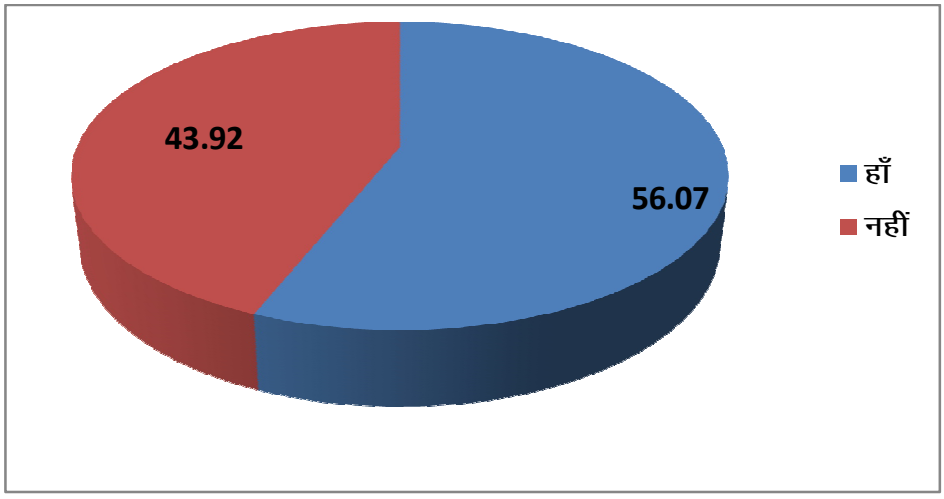

उपरोक्त तालिका के अनुसार शोध अध्ययन क्षेत्र में उत्तरदाताओं से संरक्षित वन से संबधित जानकारी एकत्र किये जाने पर 56.07 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार संरक्षित वन क्षेत्र है तथा 43.42 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार संरक्षित वन क्षेत्र नहीं है।

तालिका क्र.
वनोपज लगाने के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

क्रमांक	वनोपज	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	200	71.42
2	नहीं	80	28.57
	योग	**280**	**100**

स्त्रोत–अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर

रेखाचित्र क्र.
वनोपज लगाने के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

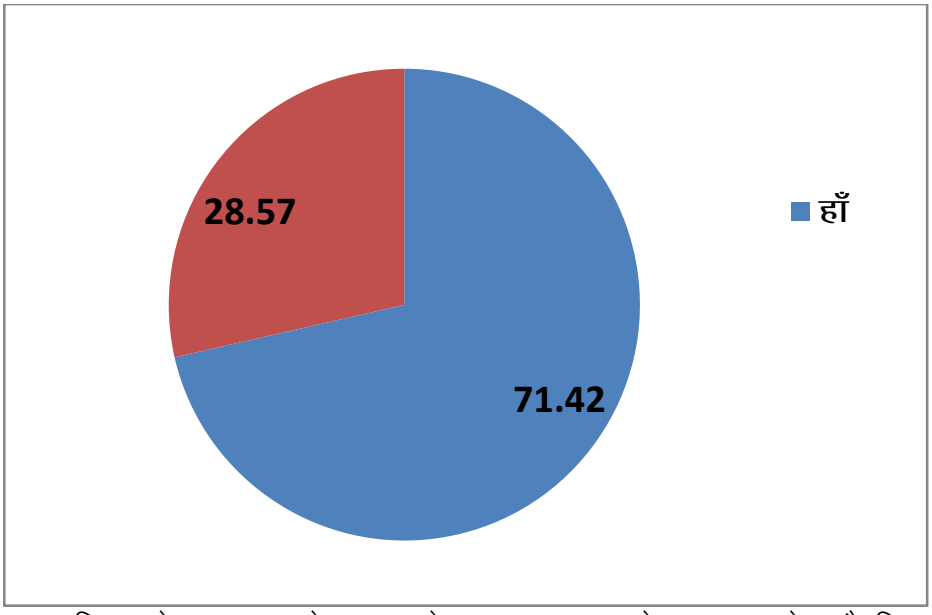

उपरोक्त तालिका के अनुसार वनोपज लगाने का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि 71.42 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने वन लगाये है तथा 28.57 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया वनोपज नहीं लगाया है।

रेखाचित्र क्र.
पिछले 20 वर्षों के वनोपज में परिवर्तन का अध्ययन

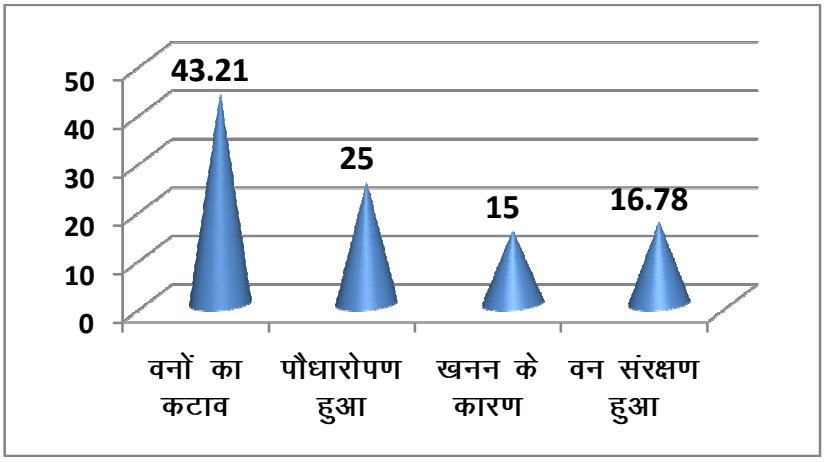

उपरोक्त तालिका के अनुसार शोध अध्ययन क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों में वनोपज में परिवर्तन का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि 43.21 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार वनोपज में परिवर्तन का कारण वनों का कटाव, 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार पौधारोपण भी हुआ है। 15 प्रतिशत उत्तरदाता वनोपज में परिवर्तन का कारण अवैध खनन मानते है, जबकि 16.78 प्रतिशत उत्तरदाता सरकार द्वारा वन संरक्षण हुआ है ये मानते है।

तालिका क्रमांक
उत्तरदाताओं को वनों से प्राप्त सामग्री की जानकारी

क्र.	सामग्री	20 वर्ष पूर्व		वर्तमान	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	नीम	17	6.071	12	4.28
2	ताड़	19	6.78	31	11.071
3	लाख / गोंद	23	8.21	32	11.42
4	सलाई	17	6.071	17	6.071
5	सीतफल	21	7.5	20	7.14
6	महुआ / गुल्ली	19	6.78	22	7.85
7	ईमली	15	5.35	17	6.071
8	चिरोंजी	11	3.92	14	5
9	आंवला	16	5.71	11	3.92
10	शहद	22	7.85	34	12.14
11	बाँस	43	15.35	35	12.5
12	फल व फूल	22	7.85	13	4.64
13	चकोडा (पुवाड़िया)	19	6.78	13	4.64
14	अन्य	16	5.71	9	3.21
	योग	280	100	280	100

- **स्त्रोत**–अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर

रेखाचित्र क्रमांक
वनों से प्राप्त सामग्री की जानकारी

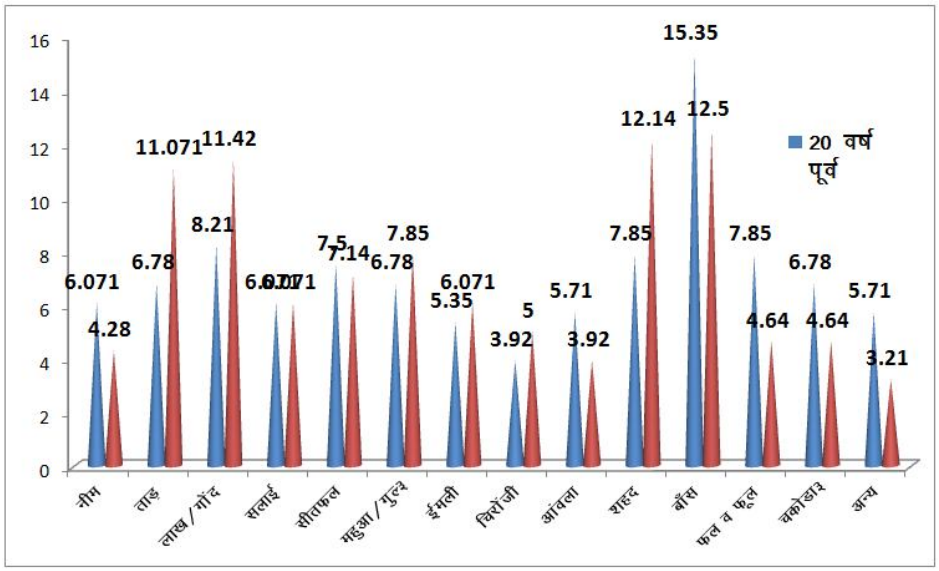

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के पश्चात अध्ययन क्षेत्र ने वनों से प्राप्त सामग्री 20 वर्ष पूर्व तथा 20 वर्ष के पश्चात् का प्राथमिक समंकों के आधार पर गणना करने पर ज्ञात होता है कि इस क्षेत्र में नीम, ताड़, लाख, सीताफल, महुआ, ईमली, चिरोंजी, आंवला, शहद, बाँस, पुवाडिया के पौधों तथा वृक्ष पाये जाते है। इनसे प्राप्त सामग्री में 20 वर्ष पूर्व नीम के पेड़ से 6.071 प्रतिशत सामग्री, ताड़ से 6.78 प्रतिशत लाख/गोंद 8.21 प्रतिशत, सलाई 6.071 प्रतिशत, सीताफल 7.5 प्रतिशत, महुआ/गुल्ली 6.78 प्रतिशत, ईमली 5.35 प्रतिशत, चिरोंजी 3.92 प्रतिशत, आंवला 5.41 प्रतिशत शहद 7.85 प्रतिशत, बाँस 15.35 प्रतिशत फल व फूल 7.85 प्रतिशत, पुवाडिया 6.78 प्रतिशत, अन्य 56.71 प्रतिशत प्राप्त होता था। अध्ययन क्षेत्र में वनों से प्राप्त सामग्री की अगर वर्तमान संदर्भ में अध्ययन करें तो ज्ञात होता है कि नीम से 4.28 प्रतिशत सामग्री, ताड़ के वृक्ष से 11.071 प्रतिशत सामग्री लाख/गोंद 11.42 प्रतिशत, सलाई 6.071 प्रतिशत, सीताफल 7.14 प्रतिशत, महुआ/गुल्ली 7.85 प्रतिशत, ईमली 6.071 प्रतिशत, चिरोंजी 5 प्रतिशत आंवला 3.92 प्रतिशत, शहद 12.14 प्रतिशत, बांस 12.5 प्रतिशत, फल–फूल 4.64 प्रतिशत, चकोड़ा/पुवाडिया 4.64 प्रतिशत तथा अन्य सामग्री 3.21 प्रतिशत प्राप्त होती है।

इस प्रकार नीम से प्राप्त सामग्री में कमी दर्ज की गयी, आंवला में, फल–फूल में, पुवाडिया में तथा अन्य सामग्री के प्रतिशत में 20 वर्ष पूर्व की तुलना में वर्तमान समय में प्रतिशत में कमी दर्ज की गयी। इसकी अपेक्षा ताड़ से प्राप्त सामग्री, लाख/गोंद सामग्री, सीताफल, महुआ, ईमली, चिरोंजी, शहद आदि सामग्रियों के प्रतिशत में बढ़ोत्तरी दर्ज की गयी। इन साम्रगियों का उपयोग दैनिक खान–पान तथा व्यावसायिक रुप से भी किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में इनका विशेषतः उपयोग मिल जाता है।

तालिका क्रमांक

वनों से प्राप्त सामग्री का उपयोग के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

क्र.	विकल्प	20 वर्ष पूर्व में		वर्तमान में	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	विक्रय करने	160	57.14	110	39.28
2	घरेलू उपयोग	120	42.86	170	60.72
	योग	**280**	**100**	**280**	**100**

- **स्त्रोत**–अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर

रेखाचित्र क्रमांक 14

वनों से प्राप्त सामग्री का उपयोग के संबंध में उत्तरदाताओं का अभिमत

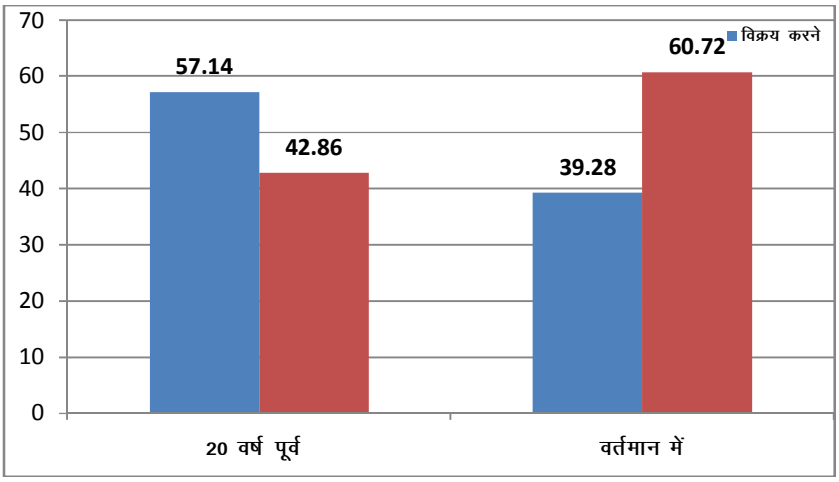

- उपरोक्त तालिका के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में वनों से प्राप्त सामग्रियों के उपयोग का अध्ययन किया गया, जिसमें 57.14 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार वनों से प्राप्त सामग्री का उपयोग विक्रय करने हेतु करते है। जबकि 42.86 प्रतिशत उत्तरदाता 20 वर्ष पूर्व इस सामग्री का उपयोग वह दैनिक या घरेलू कार्य हेतु करते है।
- उपरोक्त तालिका के अनुसार वनों से प्राप्त सामग्री का वर्तमान उपयोग पर अध्ययन करने पर 39.28 प्रतिशत उत्तरदाता वनों से प्राप्त सामग्री का उपयोग विक्रय करने हेतु करते है। जबकि 60.72 प्रतिशत उत्तरदाता इस सामग्री का घरेलू उपयोग करते है।
- 20 वर्ष पूर्व विक्रय करने का प्रतिशत वर्तमान से 17.86 प्रतिशत अधिक था जबकि घरेलू उपयोग का प्रतिशत 20 वर्ष पूर्व वर्तमान में 17.86 प्रतिशत कम थी इस प्रकार स्पष्ट है कि वर्तमान में विक्रय करने का प्रतिशत कम हुआ है तथा घरेलू उपयोग का प्रतिशत अधिक हुआ।

निष्कर्ष

- जलाऊ लकड़ी हेतु ये उत्तरदाता वनों से अपने स्वयं के खेत से, डिपो से तथा खरीद कर प्राप्त करते है। कुल उत्तरदाता अन्य तरीकों से भी लकड़ी प्राप्त करते है।
- वनों से प्राप्त सामग्रियों में नीम, ताड़, लाख, गोंद, सलाई, सीताफल, महूआ, ईमली, चिरोंजी, आंवला, शहद, बाँस, फल, फूल चकोड़ा, अन्य सामग्रियों का अध्ययन किया गया।
- वनों से प्राप्त सामग्री का उपयोग पूर्व में जहाँ 97.14 प्रतिशत लोग करते थे, वह प्रतिशत घटकर 39.28 रह गया है, जो की अच्छी पहल है।
- वनों की सामग्री विक्रय करने पर उत्तरदाताओं की कुल वार्षिक आय की गणना करने पर ज्यादातर, 30 से 40 हजार वार्षिक आय पूर्व एवं वर्तमान में देखी गयी।
- अध्ययन क्षेत्र में पायी जाने वाली वनोपज का अध्ययन करने पर सबसे ज्यादा प्रतिशत आम का पाया गया जो कि 27.14 प्रतिशत है, इसके बाद सागौन, ताड़, तेंदुपत्ता आदि आते है।
- अध्ययन क्षेत्र में उत्तरदाताओं से संरक्षित वनों का अध्ययन किया गया, जिसमें 56.07 प्रतिशत संरक्षित वन है तथा 43.92 संरक्षित वन नहीं है।
- उत्तरदाताओं की वनोपज के विपणन के माध्यम में 42.85 मण्डी के माध्यम से 42.14 व्यापारी के माध्यम से 15 प्रतिशत सरकार के माध्यम से बेचते है।
- अध्ययन क्षेत्र के 83.21 प्रतिशत उत्तरदाता सरकार की वन संरक्षण नीति से संतुष्ट है, जबकि 16.78 प्रतिशत असंतुष्ट है।
- विगत 20 वर्षों में वनोपज में परिवर्तन का भी अध्ययन किया गया, जिसमें 43.21 प्रतिशत वनों का कटाव, 25 प्रतिशत पौधारोपण, 15 प्रतिशत खनन के कारण तथा 16.78 वन संरक्षण के कारण परिवर्तन हुआ है।
- वन उपज में परिवर्तन में वनों में कमी 40 प्रतिशत, वनों में वृद्धि 15 प्रतिशत, वनों का कटाव 26.07 प्रतिशत, वृक्षारोपण 16.76 प्रतिशत हुआ है।
- अध्ययन के दौश्रान एक तथ्य में भी सामने आया कि आदिवासी लोग वृक्षों को अपना भगवान मानते है, जन्म के समय, विवाह के समय, अनेक धार्मिक आयोजनों में, व्रत–त्यौहारों में इनकी पूजा–पाठ तथा अर्चना–याचना करते है।
- इन वनों से अनेक अमूल्य धरोह विलुप्त होती जा रही है। जो भी एक मुख्य के रुप में उभर कर सामने आया है।

सुझाव

वनों से प्राकृतिक रुप से प्राप्त सामग्रियों जैसे ताड़, लाख, गोंद, ईमली, चिरोंजी, आँवला, सलाई को व्यापारिक रुप से उपयोगी बनाये जाने के लिए प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, जिससे इनका उत्पादन और विपणन अन्य स्थानों पर किया जा सके।

- वनों को आग से बचाना भी अति आवश्यक है, क्योंकि प्राकृतिक रुप से दावाग्नि होना कम ही अवसर पर होता है, जबकि मानवीय कारणों से वनों में आग ज्यादा लगती है, उससे बचाना होगा।
- निर्माण कार्य हेतु होने वाले खनन से भी वनों की कटाई को रोकना अति आवश्यक है, जिसके कारण तापमान में वृद्धि तो होती ही है, साथ ही वनोपज भारी मात्रा में नष्ट होती है।
- जनजातियों के उत्थान और विकास की योजना बनाने के साथ–साथ उनको अमल में लाने की अति आवश्यकता है।

संदर्भ सूची –

- गुप्ता मंजू (2003), जनजातियों का सामाजिक–आर्थिक उत्थान, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
- जैन प्रकाशचंद एवं त्रिवेदी मधुसूदन (1996) आदिवासी विकास योजनाएं : दशा और दिशा, शिव पब्लिशर्स, उदयपुर
- कुमार प्रमिला (2003), मध्यप्रदेश एवं भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
- महापात्र शुभकांत (2003), प्लानिंग फॉर इन्टीग्रेटेड एरिया डेवलपमेंट रजत पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- मुखर्जी रवीन्द्रनाथ (2011), सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन नईदिल्ली
- रायजादा अजीत, टायबल डेवलपमेंट इन मध्यप्रदेश, इंडिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- तिवारी शिवकुमार एवं शर्मा श्री कमल (2009) मध्यप्रदेश की जनजातियां, मध्यप्रदेश हिंन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
- वैद्य नरेश कुमार **(2003)** जनजातीय विकास : एक मिथक एवं यथार्थ, रावत पब्लिकेशन, जयपुर पृष्ठ 1